राम भवन सिंह और अन्य

बनाम

जगदीश और अन्य

22 अगस्त, 1990

[एन.एम. कासलीवाल और एम.फातिमा बीवी, जे.जे.]

संपत्ति-अंतरण अिधिनयम, धारा 43 यदि अंतरण है तो विलेख द्वारा रोक सिद्धांत लागू नहीं होता है।

यू.पी. होल्डिंग्स समेकन अधिनियम, 1954, धारा 9 - किरायेदारी अधिकारों का दावा - सीमा अधिनियम, 1963 की धारा 14 की प्रयोज्यता का प्रश्न।

भूखंडों में भूमि संख्या 6385 और 6386 बैजनाथ के तहत बंधक के रूप में राम दयाल के कब्जे में थी जो मूल किरायेदार था। उत्तरदाता संख्या 1-3 राम दयाल के वंशज हैं। उन्होंने यू. पी. होल्डिंग्स समेकन अधिनियम, 1954 की धारा 9 के तहत समेकन अधिकारी के समक्ष 30 जुलाई, 1945 के विलेख के आधार पर किरायेदारी अधिकारों का दावा करते हुए एक आवेदन दिया, जिसमें कहा गया था कि उनके नाम 1359 फसली के खतौनी में दर्ज किए गए थे। वे खेती के अधिकार में हैं और आदिवासी और बाद में सरदार बन गए हैं। उन्होंने आगे तर्क दिया कि अपीलकर्ताओं को भूमि पर अधिपत्य का कोई अधिकार नहीं है और उनके नाम गलत तरीके से खतौनी संख्या 1353 फसली में दर्ज किए गए हैं। उत्तरदाताओं ने सरदार के रूप में अपना नाम दर्ज करने के लिए प्रार्थना की।

इस आवेदन को समेकन अधिकारी द्वारा 23 जुलाई, 1967 के आदेश के माध्यम से स्वीकार किया गया। समझौता अधिकारी (समेकन) ने आदेश को उलट दिया और समेकन उप निदेशक ने प्रत्यर्थियों द्वारा दायर पुनरीक्षण को खारिज कर दिया।

इसके बाद प्रत्यर्थियों ने उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका दायर की। उच्च न्यायालय ने इसको स्वीकार किया और अपीलीय और पुनरीक्षण प्राधिकारियों के आदेशों को अपास्त कर दिया, और 3 अक्टूबर, 1972 के अपने फैसले में समेकन अधिकारी के आदेश को बरक़रार रखा।

अपीलार्थियों ने लैटर पेटेंट के तहत 3 अक्टूबर, 1972 के उच्च न्यायालय के निर्णय के खिलाफ 30 नवंबर, 1972 को एक विशेष अनुमति दायर की। यह यू. पी. न्यायालयों (पत्र पेटेंट अपील संशोधन का उन्मूलन) अध्यादेश, 1972, जो 30 जून, 1972 को लागू हुआ था, के मद्देनजर सम्पोश्नीय नहीं थी। इस प्रकार 3 अक्टूबर, 1972 के उच्च न्यायालय के आदेश द्वारा प्रत्यर्थियों के पक्ष में रिट याचिका को अंततः समाप्त कर दिया गया।

अपीलकर्ताओं ने इस न्यायालय के समक्ष कोई विशेष अनुमति याचिका दायर करके उच्च न्यायालय के आदेश को चुनौती देने के बजाय, 6 जुलाई, 1973 को निपटान अधिकारी (समेकन) के समक्ष एक आवेदन दायर करके नई कार्यवाही शुरू की, जिसे 30 अक्टूबर, 1974 को खारिज कर दिया गया था। उक्त आदेश के खिलाफ समेकन उप निदेशक के समक्ष एक पुनरीक्षण दायर किया गया था जिसे भी 21 जुलाई, 1975 को खारिज कर दिया गया था। इसके बाद अपीलकर्ताओं ने फिर से उच्च न्यायालय का रुख किया और उनके द्वारा दायर रिट याचिका को 18 सितंबर, 1975 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया।

चूंकि विषय वस्तु पर अंततः 3 अक्टूबर, 1972 के उच्च न्यायालय के फैसले द्वारा निर्णय लिया गया था, इसलिए नए सिरे से कार्यवाही शुरू करना अच्छी भावना में नहीं था क्योंकि समझौता या निगम के किसी भी अधिकारी को उच्च न्यायालय के आदेश को रद्द करने का कोई अधिकार या अधिकार क्षेत्र नहीं था। उच्च न्यायालय का दूसरा निर्णय दिनांक 18 तारीख को सितंबर, 1975 को इस न्यायालय में सी.ए. संख्या 1003/1976 में चुनौती दी गई थी।

अपील को खारिज करते हुए, न्यायालय ने, **अभिनिर्धारित किया** :

दोनों अपीलें परिसीमा अवधि समाप्त होने के बाद दायर की गई थीं। अपीलार्थियों ने माफी के लिए आवेदन किया था इस आधार पर विलंब कि वे सद्भावना और कानूनी सलाह पर पूर्व कार्यवाही का अभियोजन कर रहे थे, इसलिए सीमा अधिनियम 1963 की धारा 14 के तहत परिसीमा की अवधि की गणना में तीन साल से अधिक की अवधि को बाहर रखा जाए। प्रत्यर्थियों ने आवेदन पत्र के खिलाफ जवाबी याचिका दायर की और इसका विरोध किया। [961डी-ई]

अपील की सुनवाई में सीमा अधिनियम की धारा 14 की सीमा और प्रयोज्यता के प्रश्न पर बहस करने के प्रत्यर्थियों के अधिकारों के अधीन इस न्यायालय द्वारा 2 सितंबर, 1976 को विशेष अनुमति दी गई थी। [961एफ]

सीमा के प्रश्न के बारे में अपीलकर्ताओं ने प्रस्तुत किया कि 1198 दिनों की देरी अनिच्छा से हुई थी, हालांकि वे अपीलीय अधिकारियों के समक्ष उचित परिश्रम के साथ मुकदमा चलाना चला रहे थी, लेकिन विलंब की क्षमा के लिए आवेदन के समर्थन में अपीलकर्ताओं या अधिवक्ता के पास कोई भी उचित हलफनामा नहीं है। यह इंगित करने के लिए कोई अन्य सामग्री भी नहीं है कि अपीलकर्ताओं ने अपने उपचारों को तैयार करने में उचित परिश्रम किया था और मामले में उचित सलाह मांगी थी। उच्च

न्यायालय के फैसले के खिलाफ अपील करने का कोई अधिकार नहीं था क्योंकि इसने अपीलार्थी और पुनरीक्षण अधिकारियों के आदेशों को रद्द कर दिया था, इसलिए पक्षकार द्वारा नए निर्णय के लिए निचले अधिकारियों को बहाल करके शुरू की गई कार्यवाही कानूनी या वैध नहीं है। इसलिए अपीलों को कालबाधित होने के कारण खारिज किये जाने योग्य हैं। [961 जी-एच; 962 ए-बी]

योग्यता के आधार पर भी अपीलार्थी सफल नहीं हो सकते। निर्विवाद रूप से मूल किरायेदार बैजनाथ थे लेकिन उन्हें मकान मालिक द्वारा 1944 में प्राप्त निष्पादन डिक्री में बेदखल कर दिया गया था इसके बाद जमीन को राम दयाल के पक्ष में गिरवी रख दिया गया और गिरवीदार ने मकान मालिक के विरुद्ध डिक्री प्राप्त कर ली। प्रत्यर्थियों ने बाद में डिक्री के तहत दावों को निर्धारित करने और 30 जुलाई, 1945 के विलेख में प्रत्यर्थियों के पक्ष में पट्टा देने के लिए एक समझौता किया । इन तथ्यों को समेकन अधिकारी द्वारा स्वीकार किया गया और प्रत्यर्थियों के पक्ष में विलेख और शीर्षक होना पाए गए। बैजनाथ के पक्ष में किरायेदारी यह तब अस्तित्व में था जब 23 नवंबर, 1943 का विलेख निष्पादित किया गया था। पहले वाले के निर्वाह के दौरान एक किरायेदारी का निर्माण हो सकता है 2 अगस्त, 1945 के विलेख से पहले भी कोई अधिकार प्रदान नहीं किया गया प्रत्यर्थियों के पक्ष में पहले ही मंजूरी दी जा चुकी थी। [962 डी-जी]

यहां तक कि अपीलार्थियों का तर्क भी कि उनके पास संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 43 के तहत मामला है जो विलेख द्वारा रोक के नियम का प्रतीक है, लागु नहीं होता है क्योंकि 23 नवंबर, 1943 के विलेख के तहत अंतरण निष्क्रिय हो गया क्योंकि समझौता हो गया था। भूमि के संबंध में विद्यमान पट्टा के कारण अमान्य और मकान मालिक किराये की संपत्ति के संबंध में दूसरा पट्टा अधिरोपित नहीं कर सकता है, इसलिए 2 अगस्त, 1945 के उस दस्तावेज़ के तहत अपीलार्थियों के पक्ष में कोई हित

नहीं बनाया जा सकता है और इसलिए, रूक का सिद्दंथ का कोई सवाल ही नहीं है। [963 ई-जी]

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील सं. 1002 & 1003/1976।

(सिविल मिस. रिट संख्या 2726/1970 और सिविल मिस. रिट याचिका संख्या 9943/1975 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश दिनांक 3.10.1972 और 18.9.1975 से।)

सतीश चंदर, एस.एन. सिंह, टी.एन. सिंह और एच.एल. श्रीवास्तव, अपीलार्थी की ओर से।

जे.पी. गोयल, एम.आर. बिदासर और एस.के. जैन, प्रत्यर्थियों की ओर से।

न्यायालय का निर्णय **फातिमा बीवी**, **न्यायाधिपति** द्वारा दिया गया।

विशेष अवकाश द्वारा ये अपीलें इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णयों के खिलाफ निर्देशित हैं। प्लॉट संख्या 6385 और 6386 की 5 बीघा और 4 बिस्वा जमीन बैजनाथ, जो मूल किरायेदार था, के अधीन बंधक के रूप में राम दयाल के कब्जे में थी। प्रत्यर्थीगण 1 से 3 राम दयाल के वंशज हैं। उन्होंने समेकन अधिकारी के समक्ष यू.पी. होल्डिंग्स समेकन अधिनियम, 1954 की धारा 9 के तहत एक आवेदन दिया। उन्होंने दिनांकित 30.7.1945 विलेख के आधार पर किरायेदारी के अधिकारों का दावा किया और उन्होंने कहा कि उनके नाम 1359 फसली के खतौनी में दर्ज किए गए थे; वे कृषि अधिकार में हैं और आदिवासी और बाद में सरदार बन गए हैं। उन्होंने आरोप लगाया कि 1353 फसली के खतौनी में यहाँ अपील करने वालों के नाम गलत तरीके से दर्ज किए गए हैं और अपीलार्थियों का भूमि पर कोई अधिकार या कब्ज़ा नहीं है। प्रत्यार्थियो ने अपना नाम सरदार के रूप में दर्ज करने और अपीलार्थियों के नाम दर्ज करने के लिए प्रार्थना की।

इस आवेदन को समेकन अधिकारी द्वारा आदेश दिनांक 23.7.1967 द्वारा स्वीकार किया। समझौता अधिकारी (समेकन) द्वारा आदेश को उलट दिया गया। समेकन उप निदेशक ने प्रत्यर्थियों द्वारा दायर पुनरीक्षण को ख़ारिज कर दिया। हालाँकि, प्रत्यर्थियों द्वारा दायर सी.एम.डब्ल्यू.पी. संख्या 2726/1970 को उच्च न्यायालय द्वारा अपने निर्णय दिनांक 3.10.1972 द्वारा स्वीकार किया गया और अपीलीय और पुनरीक्षण प्राधिकारियों के आदेशों को अपास्त कर दिया जिससे समेकन अधिकारी के आदेश को बरकरार रखा। सिविल अपील संख्या 1002/1970 उच्च न्यायालय के दिनांक 3.10.1972 निर्णय के खिलाफ निर्देशित है।

अपीलकर्ताओं ने सी.एम.डब्ल्यू.पी. संख्या 2726/1970 में उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश के दिनांक 3.10.1972 के फैसले के खिलाफ 30 नवंबर, 1972 को एक विशेष अपील दायर की थी। हालाँकि, उक्त लेटर्स पेटेंट अपील सुनवाई योग्य नहीं थी और अंततः यू.पी. यू. पी. उच्च न्यायालय (पत्र पेटेंट अपील संशोधन का उन्मूलन) अध्यादेश, 1972 जो 30 जून, 1972 को लागू हुआ, को देखते हुए खारिज कर दी गई। यह रिट याचिका संख्या 2726/1970 के भाग्य का वर्णन पूरा करती है जो अंततः 3.10.72 के आदेश द्वारा प्रत्यर्थियों के पक्ष में समाप्त हुआ।

अपीलकर्ताओं ने इस न्यायालय के समक्ष कोई विशेष अनुमति याचिका दायर करने का कोई कदम उठाकर उच्च न्यायालय के दिनांक 3.10.72 के आदेश को चुनौती नहीं दी। इसके विपरीत, कुछ अधिवक्तायों की गलत और पूरी तरह से गलत सलाह पर अपीलकर्ताओं ने संझौता अधिकारी समेकन के समक्ष 6.7.73 को एक आवेदन देकर फिर से नई कार्यवाही शुरू की। वह आवेदन दिनांक 30.10.74 को निरस्त कर दिया गया। उस आदेश के विरुद्ध उप निदेशक समेकन के समक्ष पुनरीक्षण दाखिल किया गया जिसे भी आदेश दिनांक 21.7.75 द्वारा खारिज कर दिया गया। इसके बाद अपीलकर्ताओं ने सी.एम.डब्ल्यू.पी. संख्या 9943/1975 दायर किया। दिनांक 7.8.75 को उप निदेशक

समेकन के आदेश के विरूद्ध उच्च न्यायालय में प्रस्तुत किया गया। यह रिट याचिका दिनांक 18.9.1975 के आदेश द्वारा खारिज कर दी गई। उच्च न्यायायलय के इस फैसले को सिविल अपील संख्या 1003/1976 में चुनौती दी गई है। जब इसी विषय पर पिछली रिट याचिका संख्या 2726/1970 में उच्च न्यायालय ने अंततः आदेश दिनांक 3.10.1972 द्वारा प्रत्यर्थियों के पक्ष में निर्णय दिया था, तो किसी भी अधिवक्ता द्वारा सद्भावना से कोई सलाह देने का कोई सवाल ही नहीं था। समेकन अधिकारियों के समक्ष एक नया आवेदन दायर करके नए सिरे से कार्यवाही शुरू करना। कोई भी अधिवक्ता समेकन प्राधिकारियों के समक्ष नए सिरे से कार्यवाही शुरू करने और फिर सीमा अधिनियम की धारा 14 के तहत ऐसी अवधि के लाभ का दावा करने के लिए सद्भावना में ऐसी सलाह नहीं दे सकता था। किसी भी स्तर के अधिवक्ता के लिए यह जानना प्राथमिक बात थी कि समझौता या समेकन विभाग के किसी भी अधिकारी के पास उच्च न्यायालय के दिनांक 3.10.1972 के आदेश को रद्द करने का कोई अधिकार या क्षेत्राधिकार नहीं हो सकता है। समझौता अधिकारी (समेकन) ने अपने आदेश दिनांक 30.10.1974 द्वारा आवेदन को खारिज करना उचित ठहराया था, और उसके बाद उप निदेशक (समेकन) द्वारा दिनांक 21.7.1975 के आदेश द्वारा पुनरीक्षण किया गया था। फिर अपीलकर्ताओं ने उसी गलत सलाह के तहत सद्भावनापूर्वक सी.एम.डब्ल्यू.पी. संख्या 9943/1975 दायर किया। जिसे उच्च न्यायालय ने 18.9.1975 को खारिज कर दिया। उच्च न्यायालय के दूसरे फैसले को अब सिविल अपील संख्या 1003/1976 में चुनौती दी गई है।

दोनों अपीलें परिसीमा अवधि समाप्त होने के बाद दायर की गई थीं। अपीलकर्ताओं ने इस आधार पर विलम्ब की माफी के लिए आवेदन किया था कि अपीलकर्ता कानूनी सलाह पर अच्छे विश्वास के साथ पिछली कार्यवाही चला रहे थे और कार्यवाही चलाने में लगी तीन साल से अधिक की अवधि को परिसीमा अधिनियम,

1963 की धारा 14 के प्रावधान के तहत परिसीमा की अवधि की गणना में शामिल नहीं किया जा सकता है। प्रत्यर्थियों ने आवेदन का प्रतिवाद दायर किया और इसका विरोध किया।

इस न्यायालय ने अपील की सुनवाई में सीमा के प्रश्न और सीमा अधिनियम की धारा 14 की प्रयोज्यता पर बहस करने के उत्तरदाताओं के अधिकार के अधीन दोनों मामलों में दिनांक 2.9.1976 के आदेश के तहत विशेष अनुमति प्रदान की।

पहला सवाल जो हमें तय करना है वह सीमा का है। अपीलकर्ताओं के अनुसार 1198 दिनों की देरी अनिच्छा से हुई थी और अपीलकर्ता अपीलीय और पुनरीक्षण प्राधिकारियों के समक्ष पिछली कार्यवाही और अपने अधिवक्ता द्वारा दी गई सलाह के आधार पर उचित परिश्रम के साथ मुकदमा चला रहे थे। देरी माफ़ी के आवेदन के समर्थन में अपीलकर्ताओं या अधिवक्ता का कोई उचित हलफनामा नहीं है। यह इंगित करने के लिए कोई अन्य सामग्री भी नहीं है कि अपीलकर्ताओं ने अपने उपचारों को पूरा करने में उचित परिश्रम किया था और मामले में उचित सलाह मांगी थी। जब पक्षकार के पास अपील का कोई अधिकार नहीं था, तो रिट याचिका में फैसले को चुनौती देने वाली उच्च न्यायालय के समक्ष शुरू की गई कार्यवाही को सद्भावनापूर्ण नहीं माना जा सकता है। इसके बाद की कार्यवाही भी कानूनी या वैध नहीं है। जब रिट याचिका में उच्च न्यायालय का निर्णय अपीलीय और पुनरीक्षण अधिकारियों के आदेशों को रद्द करने वाला था, तो पक्षकार इस आधार पर आगे नहीं बढ़ सकती थी कि मामला नए निर्णय के लिए निचले अधिकारियों को बहाल कर दिया गया था। इसलिए हम इस बात से संतुष्ट नहीं हैं कि परिसीमा की सीमा को पार करने के लिए अपीलकर्ताओं द्वारा आग्रह किए गए आधार में कोई योग्यता है। अपीलें कालबाधित होने के कारण खारिज किये जाने योग्य हैं।

हम पाते हैं कि योग्यता के आधार पर भी, अपीलकर्ता सफल नहीं हो सकते। पर्त्यार्थियों ने 30.7.1945 के विलेख के तहत पट्टे पर अपना दावा अपने पक्ष में किया। समेकन अधिकारी ने विलेख के सत्यता स्वीकार की और प्रत्यर्थियों के पक्ष में शीर्षक पाया गया। अपीलकर्ताओं ने 23.11.1943 के पहले के विलेख की निरंतरता में 2.8.1945 के बाद के दस्तावेज़ के तहत अधिकार का दावा किया था। निर्विवाद रूप से, ज़मीन मूल किरायेदार बैजनाथ के कब्जे में थी और 1944 में मकान मालिक द्वारा प्राप्त डिक्री के निष्पादन में उन्हें बेदखल कर दिया गया था। 23.11.1943 के विलेख के निष्पादन के समय बैजनाथ के पक्ष में किरायेदारी कायम थी। पहले वाले के अस्तित्व के दौरान किरायेदारी का निर्माण कोई अधिकार प्रदान नहीं कर सकता है। 2.8.1945 के विलेख से पहले ही प्रत्यर्थियों के पक्ष में पट्टा दिया जा चुका था। जिन परिस्थितियों के तहत यह अनुमति दी गई थी, वे भी उत्तरदाताओं के पक्ष में स्वामित्व खोजने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। जमीन राम दयाल के पक्ष में बंधक होने पर जमींदार ने बैजनाथ के विरुद्ध डिक्री प्राप्त कर ली थी। गिरवीदार ने बाद में जमीन में फसल के मूल्य के रूप में 214 रुपये की राशि के लिए जमींदार के खिलाफ डिक्री प्राप्त की। बाद में मकान मालिक और प्रत्यर्थियों के बीच डिक्री के तहत दावे का निस्तारण करने और प्रत्यर्थियों के पक्ष में पट्टा देने के लिए एक समझौता किया गया। समेकन अधिकारी द्वारा ये तथ्य प्रत्यर्थियों के पक्ष में पाये गये हैं। अपीलीय और पुनरीक्षण प्राधिकारियों के आदेशों को रद्द करते समय उच्च न्यायालय की राय थी कि अभिलेख पर स्पष्ट त्रुटि थी। अपीलीय प्राधिकारी अपने निष्कर्ष में गलत पाया गया कि अपीलकर्ताओं के कब्जे जारी रहने से प्रत्यर्थियों ने अपना अधिकार खो दिया। उच्च न्यायालय ने ध्यान दिया कि समेकन अधिकारी के समक्ष भी, अपीलकर्ताओं ने 1943 के पट्टे के आधार पर अपना दावा जरी नहीं रखा और यह भी पाया कि 23.11.1943 का विलेख वैध समझौता नहीं था क्योंकि भूमि बैठे हुए किरायेदार के कब्जे में थी। यह भी ध्यान दिया गया कि

2.8.1945 के विलेख के तुरंत बाद, कब्जे के संबंध में विवाद उत्पन्न हुआ, कि अपीलकर्ताओं को आपराधिक न्यायालय के आदेश को रद्द करते हुए प्रत्यर्थियों द्वारा प्राप्त डिक्री के आधार पर बेदखल कर दिया गया था। डिक्री के अंतिम लंबित मुकदमे बनने से पहले, यू.पी.जमींदारी उन्मूलन अधिनियम लागू हुआ। बाद के कानून के मद्देनजर, प्रत्यर्थियों ने यूपी समेखन अधिनियम के तहत कार्यवाही की और कार्यवाही वर्तमान अपीलों में समाप्त हुई।

सक्षम प्राधिकारी के निश्चित निष्कर्षों के प्रकाश में कि प्रत्यर्थियों ने 30.7.1945 के विलेख के तहत किरायेदारों के रूप में वैध शीर्षक प्राप्त किया है और अपीलीय और पुनरीक्षण प्राधिकारियों की कार्यवाही में स्पष्ट गलती जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा पाया गया है, यह है अब अपीलकर्ताओं के लिए यह दावा करना संभव नहीं है कि वे भूमि पर कब्ज़ा पाने के हकदार वास्तविक किरायेदार हैं। हालाँकि 23.11.1943 के विलेख पर आधारित दावा निचले अधिकारियों के समक्ष नहीं रखा गया था, लेकिन हमारे सामने यह तर्क दिया गया है कि अपीलकर्ताओं के पास संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 43 में निहित सिद्धांत पर मामला है। अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि भले ही 23.11.1943 का विलेख निष्क्रिय था या इस कारण से वैध नहीं था कि मकान मालिक के पास 30.6.1944 को कब्जा प्राप्त करने के बाद से कोई कब्जा नहीं था, अपीलकर्ताओं ने किरायेदारी का अधिकार हासिल कर लिया और इसकी पुष्टि 2.8.1945 के विलेख द्वारा हो गई है, तर्क आकर्षक होते हुए भी स्वीकार्य नहीं है।

संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 43 विलेख द्वारा रोक के नियम का प्रतीक है। यह धारा उस अंतरिती को सक्षम बनाती है जिसे धोखाधड़ी या गलत प्रस्तुतिकरण के आधार पर अंतरण किया जाता है, ताकि अंतरणकर्ता बाद में प्रदान की गई संपत्ति में अपने किसी भी हित के विकल्प को अपने पास रख सके, ऐसा करने से वह किसी भी बाद के खरीदार के अधिकार पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालता है। बिना सूचना के मूल्य.

इस प्रकार जब कोई पट्टादाता गलती से यह दर्शाता है कि वह किसी संपत्ति को पट्टे पर देने के लिए अधिकृत है और उसका पट्टा बनाता है और बाद में उस संपत्ति का अधिग्रहण करता है, तो पट्टाकर्ता पट्टेदार से संपत्ति प्राप्त करने का हकदार है। यदि अंतरण अमान्य है तो इस सिद्धांत का कोई उपयोग नहीं होता है। 23.11.1943 के विलेख के तहत अंतरण किसी धोखाधड़ी या गलत प्रतिनिधित्व के कारण निष्क्रिय नहीं हुआ। भूमि के संबंध में मौजूदा पट्टे के कारण समझौता अमान्य और निष्क्रिय था और चूंकि मकान मालिक किराए की संपत्ति के संबंध में दूसरा पट्टा नहीं लगा सकता था, इसलिए उस दस्तावेज़ के तहत अपीलकर्ताओं के पक्ष में कोई हित नहीं बनाया जा सका और, इसलिए, रोक के सिद्धान्त का कोई सवाल ही नहीं है। प्रत्यर्थियों के पक्ष में दिनांक 30.7.1945 के विलेख का निष्पादन 1944 में संपत्ति की डिलीवरी के बाद कोई भी अधिकार प्राप्त करने के अपीलकर्ताओं के दावे को नकारात्मक करता है। इसलिए हम इस विवाद को खारिज करते हैं।

हम तदनुसार मानते हैं कि उच्च न्यायालय के निर्णय के साथ हस्तक्षेप करने का कोई वैध आधार नहीं है। इसलिए, हम अपीलों को खारिज करते हैं। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, हम पक्षकारों को उनकी संबंधित लागत वहन करने का निर्देश देते हैं।

एस.बी.

याचिकाएं खारिज की गईं।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' के जरिए अनुवादक की सहायता से किया गया है।

अस्वीकरण : यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।